# "तुलसी के समन्वयवाद"

समन्वय हिन्दी साहित्य की ही नहीं समग्र भारतीय साहित्य की मौलिक विशेषता रही है। गो० तुलसीदास हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ समन्वयवादी कलाकार हैं। समन्वय का अर्थ है दो परस्पर विरोधी एवं विपरीत विचार धाराओं का ऐसा सामंजस्य जिसमें परस्पर विरोध का मूलोच्छेद हो जाए तथा एक तीसरी दिशा निकल आये। तुलसी ने सगुण निर्गुण, ज्ञान, प्रेम की साधना और उपासना का, वैष्णव और शैव का वैष्णव साधना का साहित्य वैराग्य का द्वैत अद्वैतवाद और पुष्टिमार्ग का तथा इसके अलावे भारतीय सामाजिक तथा नैतिक धारातल पर होनेवाली कई पारस्परिक विरोधों के बीच सामंजस्य स्थापित किया है।

सर्वप्रथम सगुण और निर्गुण दोनों को गो० तुलसीदास जी ने जीव की आध्यात्मिक यात्रा के दो मार्गों के रूप में स्वीकार किया है। दोनों एक ही गन्तव्य के दो मार्ग हैं दोनों में कोई मौलिक भेद नहीं जो ब्रह्म निर्गुण निराकार निर्विकल्प है वही भक्त के प्रेम फाँस में बंधकर सगुण साकार भी हो जाता है।

कवि की मान्यता है —

"सगुण ही अगुण नहीं कछु भेदा।
उभय हरही भव संभव खेदा।
अगुण अरूप अलख अज होई
भगत प्रेमवश सगुण सो होई।।"

तुलसी के राम भी निर्गुण निर्विकार ब्रह्म के ही अवतार हैं जिसकी विशेषता बतलाते हुए गो० तुलसीदास ने कहा है —

बिनु पद चलै सुनै बिनु काना
कर बिनु करम करै बिधि नाना

आनन रहित सकल रस भोगी
बिनु बानी बकता बड़ जोगी।
तन बिनु परस नयन बिनु देखा
ग्रह घ्रान बिनु बास असेखा
ब्रह्म जो व्यापक बिरज अज, निर्गुण विगत विनोद
सो अज प्रेम भक्ति बस, कौसल्या के गोद ॥

स्वरूप है कि गोद -

तुलसीदास के आराध्य देव सगुण साकार परब्रह्म भी वही राम हैं जो निर्गुण निर्विकल्प नारायण ईश्वर को ज्ञान का विषय न माना जा सकता है और प्रेम का आलम्बन भी। कबीर ने निर्गुण ब्रह्म को ज्ञान का विषय बताया है। किन्तु प्रेम की महत्ता भी उन्होंने स्वीकार की। जायसी ने उन्हें प्रेम का आलम्बन बताया। ब्रह्म को आरोपित करते हुए पद्मावती के दिव्य चिन्मय एवं अलौकिक सौन्दर्य की चर्चा करते हुए लिखते हैं —

तेहि आगे थिर रहा न कोऊ,

धरना कुछ वैसी ही धरती है पद्मावती को, देखते ही रत्नसेन मूर्छित हो जाता है। जायसी शायद उस दर्शन का प्रतिपादन करना चाहते हैं कि उज्ज्वलतम ब्रह्म ज्योति के समक्ष मानव के चरम चक्षु नहीं ठहर सकते। इसकी प्राप्ति लिये जायसी ने प्रेम को ही श्रेयस्कर मार्ग बताया। प्रेम के अभाव में ईश्वर को पाना संभव नहीं। तुलसी कबीर के ज्ञान तथा जायसी के प्रेम दोनों का समन्वय करते हुए कहते हैं —

" जाने बिनु न होइ परतीती बिनु परतीती होइ न प्रीति।
प्रीति बिना न भक्ति दृढ़ाई, जिमि खगपति जल कै चिकनाई
बिनु बिस्वास भगति नहीं, तेहि बिनु द्रवहिं न राम
राम कृपा बिनु सपनेहु जीव न लह विश्राम ॥

आगे चलकर गो० तुलसीदास जी ज्ञान और भक्ति के बीच अभेद को भी स्वीकार किया है। उनकी स्थापना ज्ञान से भक्ति में अंतर के ऐसे ही नहीं हुई

इस पृष्ठ पर ज्ञान और प्रेम अथवा ज्ञान और भक्ति दोनों के स्वरूप भेद से आगे तत्पश्चात उपकर्षि का कहना है कि वह औत्सा और भाव तत्वतः एक ही भिन्न नहीं।

इस सामन्जस्य के बाद कवि ने नैराश्य और वैराग्य के बीच भी समन्वय स्थापित किया है परम्परागत मान्यता के अनुसार वैराग्य के लिए गृहस्थ धर्म का त्याग अनिवार्य बताया गया है किन्तु याज्ञवल्क्य जी ने मैत्रेयी के साथ तथा जनक अरुन्धति, द्रौपदी के साथ अनुकूलता तथा विदेह राज के साथ सुनैना के दाम्पत्य जीवन में त्याग एवं सहभागिता के बीच प्रतिष्ठित वैराग्य को दिखलाया है और वैराग्य की दूरी समाप्त कर दिया है। एक व्यक्ति एक साथ सारे हार्दिक दायित्वों का निर्वाह करता हुआ भी वीरक्त हो सकता है। विरक्ति योगी से ही नहीं की आवश्यकता है कर्मों से नहीं; रामचरित मानस में मैत्रेयि जनक और भरत जैसे पात्र स्वकर्तव्यों के प्रति अनिवार्य तथा नैतिक योगी की ओर से विरक्त हैं।

सम्पत्ति में भरत चमुनी

तेली तिली साधन पिंजरा रासी धारि नुसार
इसी तरह विदेह राज भी पुत्र पत्नी के मोह बंधन में नहीं फंसा रहता है। और उनके राज्य में चाण्डाल के घर में जाने वाले विभूतियों को देखकर देवराज इन्द्र भी लज्जित रहते हैं

समस्त भोगो के बीच पलते हुए रीति साहित्य के स्वामी राजा जनक को भौतिक सुखों से कोई वास्ता नहीं, साहित्य और वैराग्य का समन्वय इससे और क्या हो सकता है।

गोस्वामी जी ने अद्वैतवाद और पुष्टि मार्ग का भी समन्वय किया है। अद्वैत दर्शन की मान्यता है कि ब्रह्म सत्यं जगत मिथ्या जिवो ब्रह्मैव नापरः। अर्थात ब्रह्म सत्य संसार मिथ्या है जीव ब्रह्म ही है दूसरा नहीं। गोस्वामी जी भी ईश्वर - अंश जीव अविनाशी चेतन कहकर स्वीकार किया है। ~~दूसरी~~ दूसरी पुष्टी मार्गीय दर्शन की धारा है — पोषणं तदनुग्रह अर्थात ईश्वर की कृपा से ही प्राणी मात्र का पोषण होता है। तुलसी इसे भी इनकार नहीं करते, इस मत का समर्थन करते हुए वे कि सोई जानहि जेहि जनाई जावत तुम्ही तुम्ही होई जाई

तुलसी के मतानुसार ब्रह्म का अर्थ जीव मोहवश माया और ~~अज्ञा~~ अज्ञान के बंधनों में बँध जाता है। इन बंधनों से वह तब तक मुक्त नहीं होता जब तक उस पर हरि कृपा नहीं होती।

उक्त मान्यताओं के अन्तर्गत तुलसी ने साधना और उपासना के बीच समन्वय स्थापित किया। तुलसी ने जिस भक्ति की चर्चा की है वही योग है। गीता में भी भक्ति की चर्चा की गई। रामचरितमानस में भी भगवान राम लक्ष्मण को भक्ति योग का उपदेश देते हैं। वस्तुतः ज्ञान और भक्ति दोनों में से किसी को कम कहना कठिन है। जो समस्या स्वं स्वरूप की है वही भक्ति और योग का है। भक्ति का उद्देश्य मोक्ष है

ज्ञानहि भगतिहि अंतर केता, जुहि में विपुल विवेक
नहीं ओर
जिस तरह उन दोनों चीजों पृथक है
स्वरूप भेद से पृथक हैं वैसे ही ज्ञान और
भक्ति दोनों से जीव को पूर्ण तक पहुँचाने
का मार्ग है। भले ही तुलसी ने ज्ञान मार्ग
को दुर्लभ और भक्ति मार्ग को सुलभ बताया
वैष्णव और शैव के बीच के ऐक्य
बड़े अच्छे ढंग से समन्वय उपस्थित किया है
विश्वनाथ से अलग भगवान किसी दूसरी सत्ता
का नाम नहीं हो सकता। दोनों पृथक ही बल्कि
दो रूप ही हो सकते हैं। तुलसी ने शिव और
विष्णु के बीच परस्पर उपास्योपासक भाव का
संबंध बताते हैं। शिव राम की पूजा करते हैं
उनके नमस्कार में भरत अभिमानमूलक रावण
के निवारणार्थ स्वामित्व करते हैं। वन जाते
समय भगवान राम तीर्थराज प्रयाग में भगवान
शंकर के पार्थिव लिंग की पूजा करते हैं। लंका
प्रयाण के पूर्व शिव की स्थापना होती है।
भगवान राम का कहना है — "कोऊ नहीं
शिव समान प्रिय मोरे।
शंकर प्रिय मम द्रोही शिव द्रोही मम दास
ते नर करहिं कलप भरि घोर नरक महँ वास॥
भगवान शंकर कहते हैं — जासु कथा कुंभज ऋषि गाई
भगति जासु मैं कहेउ देवऋषि धीरा॥
भगवान विष्णु परतापी नारद को शांति लाभ के लिए
शिव नाम का जाप बतलाते हैं। भगवान शंकर भरणासन्न
मुमुक्षुओं को राम नाम का उपदेश देते हैं।
तुलसी ने विष्णु को शैव को उपास्य और शिव
को वैष्णव का उपास्य बताया है।
इस प्रकार तुलसी ने शैव
और वैष्णव की मत का भी समन्वय किया है।

Scanned with CamScanner

तुलसी समाज में फैले अनेक विरोधी विचारों का भी समन्वय स्थापित किया है। तुलसी के प्रकृति काल में जाति पाँति, ऊँच नीच की प्रवृत्तियाँ भी जोर पकड़ गई थी। कवि ने उन-प्रवृत्तियों के बीच भी समन्वय करने का भरपूर-प्रयास किया है।

तुलसी ने गार्हस्थ्य आश्रम को पूज्य बतलाया किंतु शील विकल ब्राह्मण को रावण की तरह-वर्णी और द्विजनीय बतलाया है। भगवान राम क्षत्रिय होकर भी ब्राह्मण रावण की हत्या करते हैं। जिस कारण बोध की होता है उसके निवारणार्थ उन्हें पड़ी चाण्डाल कागभुशुण्डी की शरण में जाना पड़ता है और राम कथा के सुयोग्य अधिकारी के रूप में पार्वती-को चुने हैं - जो शंकर राम कथा के प्रिय अधिकारी कहा है वे तो "सुनहु सती पावन मति तोरी रघुपति चरण कुमुनही पोरी" अत्यंत उत्कृष्ट सम्मान के लायक पाया है।

इस प्रकार गोस्वामी तुलसीदास ने अनेक अन्तर्विरोधों के बीच समन्वय स्थापित किया है।

× —— × —— × –